-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-

## प्रथम अध्याय -

डॉ० शिवप्रसाद सिंह का व्यक्तित्व एंव कृतित्व

-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-:-

# डा॰ शिवप्रसाद सिंह का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

## अ) जीवन वृत्त :

### १) जन्म स्थान और जन्मतिथि –

प्रख्यात कथाकार और विचारक डा॰ शिवप्रसाद सिंह का जन्म १९ अगस्त सन १९२८ को उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद में जलालपुर (जमनियाँ) ग्राम के एक सम्भ्रान्त मध्यवर्गीय कृषक परिवार में हुआ। जमनिया क्षेत्र के ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व को देखते हुए तथा राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के क्षोभ एवं विद्रोह के परिवेश के कारणही डा॰ शिवप्रसाद सिंह के व्यक्तित्व विकास में भी काल एवं स्थान का योगदान रहा है। यद्यपि न तो वे किसी बड़े बाप के बेटे ही है और न परिवार से किसी भी प्रकार का साहित्यिक, अध्यात्मिक और कलात्मक संस्कार ही उन्हें दाय के रूप में मिला है, फिर भी पिता श्री चन्द्रिकाप्रसाद सिंह और माता श्रीमती कुमारी देवी के परम्परागत संस्कारशील संयुक्त हिन्दू परिवार की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति ऐसी अवश्य थी। साथ ही साथ पितामह गणेश सिंह जो एक बड़े जमींदार थे, जिनकी पूरे हजार बीघे की सीरदारी थी और तीन-तीन मौजो में छावनियाँ थी तथा जिनके खूंटो पर चालीस बैल और दर्जनों गाय-भैंसे बंधी रहती थी। ऐसे समृद्ध परिवार में जन्म लेने के कारण तथा माँ-बाप से ज्यादा दादी माँसे बचपन में प्यार मिलने के कारण बालक शिवप्रसाद को अपने प्रारंभिक जीवन में किसी बड़ी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा, तो भी परिवार के टूटने के साथ ही शिक्षा में निरंतर आर्थिक बाधायें आती रही। इण्टर से एम॰ए॰ करने के बीच कई बार पढ़ाई छूटते छूटते बची।

२) शिक्षा दीक्षा -

बालक शिवप्रसाद सिंह की शिक्षा दीक्षा का प्रारम्भ जलालपुर, पोस्ट जमनियाँ, जिला - गाजीपुर की प्राइमरी पाठशाला से हुआ। मिडिल स्कूल के लिए जमनियाँ कस्बे के मिडिल स्कूल में नाम लिखाया था पर इसी बीच आर्थिक कारणों से उन्हें स्कूल छोड़ना पड़ा। और फिर गाँव से आठ मील दूर मिडिल स्कूल बरहनी में नाम दर्ज किया और १९४२ में मिडिल स्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण हुए। "होनहार बिरवान के होत चीकने पात्" के अनुसार प्रारम्भ से ही कुशाग्र बुध्दि के विद्यार्थी रहे हैं और अध्ययन से विशेष रुचि लेते थे। परिणामत: १९४७ में "यू॰पी॰ बोर्ड" की हायस्कूल की परीक्षा गणित, बीजगणित, संस्कृत और इतिहास में विशेष योग्यता के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। तथा १९४९ में इण्टर मीडिएट की परीक्षा सुप्रसिध्द शिक्षण संस्था उदय प्रताप कॉलेज, वाराणसी से संस्कृत एवं तर्कशास्त्र में विशेष योग्यता के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। इसी वर्ष काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में बी॰ए॰ कक्षा में प्रवेश लिया। वहाँ इनकी प्रतिभा एवं लगन से प्रभावित होकर तत्कालीन हिन्दी विभागाध्यक्ष श्री केशवप्रसाद मिश्र ने इन्हें प्रर्याप्त प्रोत्साहन दिया। वहीं से साहित्य के प्रति अनुराग और अभिरुचि में वृध्दी हुई। फिर भी १९५१ में हिन्दी, दर्शन, संस्कृत, और अंग्रेजी विषयों को लेकर द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए लेकिन विश्वविद्यालय में पांचवाँ स्थान मिला और हिन्दी साहित्य और दर्शन शास्त्र में प्रतिष्ठा (म॰म॰ पम्ड ) के साथ योग्यता हासिल किया। १९५१ में हिन्दी साहित्य विषय लेकर एम॰ए॰ में प्रवेश लिया और १९५३ की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने के साथ ही योग्यताक्रम में प्रथम स्थान पाकर शीर्षस्थ भी रहे। तत्पश्चात् विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विशेष छात्रवृत्ति प्राप्त करके १९५७ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से पीएच॰डी॰ की उपाधि पाई। शोध का विषय था - "सूर पूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य।" इसके पहले भी एम॰ए॰ की परीक्षा के लिये "विद्यापति और अवहट्ट भाषा" लघु प्रबन्ध लिखकर काफी प्रशंसाप्राप्त कर ली थी।

३) शिक्षण कार्य – पहली नियुक्ति –

डॉ॰ सिंहजी की इस योग्यता से प्रभावित होकर सन १९५८ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त कर लिया गया और १९६७ से रीडर के पद को अलंकृत कर रहे हैं। अध्यापक के रूप में भी काफि हद तक सफल बने रहे हैं। साथ ही साथ विद्यार्थियों में भी काफी लोकप्रिय है और आदर के साथ सम्मानपूर्वक रहे हैं आपके पांडित्य और गम्भीर व्यक्तित्व की छाप आपके विद्यार्थियों पर पडती है। इसके अतिरिक्त शोध निर्देशक के रूप में भी आपकी अच्छी ख्याति है। आपके व्यापक अध्ययन, उदार व्यक्तित्व एवं सहयोगी प्रवृती के दूर-दूर से जिज्ञासू विद्यार्थी आते रहते हैं।

४) परिवार और दाम्पत्य जीवन –

समृध्द जमींदार बाबू गणेश सिंह के पौत्र और चन्द्रिकाप्रसाद सिंह के सुपुत्र डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह और शम्भुप्रसाद सिंह दो भाई है। डाक्टर जी अग्रज है और शम्भुप्रसाद अनूज जो गाँव पर खेती-बाडी का काम देखते हैं। माँ श्रीमती कुमारी देवी गम्भीर प्रशान्त सांस्कृतिक ग्राम नारी-व्यक्तित्व की धनी थी। सनातन नारी परम्परा की स्नेहशील ममता और संस्कार की वे प्रतिमूर्ति थी। इनमें अभिजात कुल वधू के साथ गहन उत्तरदायित्व बोध भी था।

पत्नी के रूप में श्रीमती धर्मा को पाकर निश्चय ही शिवप्रसाद जी सौभाग्यशाली है। आप न तो अधिक पढी-लिखी है और न साहित्य या किसी अन्य ललित कला के प्रति आपको विशेष रुचि है फिर भी साहित्यकार शिवप्रसाद के साहित्यिक जीवन में आपका इस प्रकार सहायक होना बहुतों के लिये ईर्ष्या का विषय है। समस्त गृहिस्थिक दायित्वों को अपने इस प्रकार निष्ठापूर्वक संभल रखा है। कि डा॰ साहब को कभी आँख उठाकर

उधर देखने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। यदि आपका यह दुर्लभ सहयोग और सहकार भाग न मिलता तो शिवप्रसाद सिंह इतने निर्विघ्न रूप में और अनन्यभाव से साहित्यिक सेवा कैसे कर पाते ? आधुनिकता के ताम-झाम से दूर नागरिकता की कृत्रिमता से बेखबर सहजता, सरलता और सादगी में लिपटी कर्मठता की देवी पत्नी श्रीमती धर्मा सचमुच लेखक के लिए एक वरदान है। एक पुत्र श्री नरेन्द्र सिंह और एक सुपुत्री कुमारी मंजुश्री का आदर्श परिवार है। डा॰ सिंह जी की एकमात्र सुपुत्री मंजुश्री का १९ अगस्त सन १९८४ को स्वर्गवास हो गया है। और नरेंद्र ही डॉक्टर सिंह जी का एकमात्र आधार रहा है। सम्प्रति सारा परिवार १३, सुधर्मा गुरुधाम कालोनी, वाराणसी के नीजी मकान में सुख शान्ति से निवास कर रहा है।

ब) व्यक्तित्व :

१) बाह्य व्यक्तित्व -

पक्का, गेहुंआ रंग भरा हुआ "क्लीन शेव्ह" चेहरा, तीखीनाक और काफी बड़ी-बड़ी आंखे, औसत कद के ऐसे व्यक्ति को दूर से देखकर ही यह कह उठना कि "प्रसाद जी के नायक की परिकल्पना साकार हो गई है।" [१] सर्वथा उचित ही है। प्रतिभा के धनी शिवप्रसाद सिंह के व्यक्तित्व से गम्भीरता, अक्खड़ता के साथ धीर उदात्त और ललित का मेल भी स्पष्ट झलकता है। आपके चेहरे के दो प्रमुख आकर्षण है, जो पहली नजर में ही मन को बरबस बांध लेते है। एक तो प्रचलन के विपरीत कान के उपर काफी उंचा खत दूसरे उनकी भृकुटी की कमनीय वक्रता जिसे देखते ही "दोहावली" का यह दोहा स्मरण हो आता है।

"मुकुर निरखि मुख राम प्रभु, गलत गुनहि दै दोष तुलसी से सठ सेवकन्हि, लखि जनि परहि सरोष।।" [२]

२) <u>सरल गंभीर स्वभाव</u> -

गुरू गम्भीर स्वभाव और कम बातें करना आपके व्यक्तित्व की विशेषतायें है लोगों की यह आम शिकायत है कि वे अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के आदमी है और किसी से मिलते जुलते नहीं। इन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि - "मैं अपने से किसी पर खुलता नहीं हूँ। यह मेरा स्वभाव है। जब तक कोई खुद बातचीत शुरू नहीं करता मैं चुप ही रहता हूँ। शायद इसीलिये लोग मुझे गैरमिलनसार मानते है।" [३]

परन्तु जिसको अन्तरंग मानकर खुलते है, उसके साथ साहित्य पर घंटो बातचीत करते है और बीच-बीच में उन्मुक्त उद्हास भी लगाते हैं। वैसे वे हँसने बहुत कम हैं। जो लोग इनके निकट आने की कोशिश करते हैं वे जल्दी ही इनके इस स्वभाव को पहचान और स्वीकार कर लेते हैं। तो भी इनको एकान्तप्रिय भीड और समूह को नापसन्द करनेवाला, आत्मकेन्द्रित आज के सन्दर्भ में "अनशोशल" कहा जा सकता है। इनका समवय, अधिकवय या अल्पवय, साहित्यिक गैर साहित्यिक, स्त्री या पुरुष कोई भी ऐसा बहुत घनिष्ठ मित्र नहीं है जिससे वे अपने मन की सारी बाते कह सके शायद इसिलिए उन्होंने खुदही यह स्विकार किया है कि - "मैं एकदम कटा हुआ आदमी हूँ।"

शिवप्रसाद जी का ऐसा स्वभाव बन गया है कि किसी भी आगन्तुक को बडी बडी आँखों से कुछ देर तक एक टक देखते रह जाते हैं। बातचीत के समय भी कहीं सिलसिला खत्म होनेपर ऐसी टकटकी लगाकर निर्निमेष से निहारने लगते हैं जैसे सामने वाले की आँखों में कुछ तलाश रहे हों। साथ ही अध्ययन के क्षेत्र में जितने गम्भीर हैं अध्यापन के क्षेत्र में भी उतनेही गम्भीर

लगते है। क्रोध आता तो बहुत कम है, लेकिन जब आता है तो बहुत सीमाओं के पार तक चला जाता है। सब मिलाकर एक संवेदनशील व्यक्तित्व ही उजागर होता है। सहृदयता बाहर से दिखावटी भले ही न हो पर है अवश्य।

निश्चय ही शिवप्रसाद जी के बाह्य व्यक्तित्वपर सादगी की छाप है और इनके शरीरपर किसी ने ऐसी साज-सज्जा नहीं देखी है जिसमें से अमीरी अथवा प्रदर्शन की बू आती हो। धोती कुर्ता आपके प्रियवस्त्र है, परन्तु स्वच्छता और शुभ्रता के साथ सम्भ्रान्त सुरुचिपूर्णता इनके परिधान की अनिवार्यता है। घर पर अधिकतर चारखाने की लुंगी और आधी बाँह की गंजी पहनते हैं। गले में रुद्राक्ष की माला और दाहिनी बाँह में ताबीज धारण करते हैं। बहुतों को वे एकदम बनारसी "पंडा" जैसा लगते हैं।

इनके पढने - लिखने, उठने - बैठने का एक ही कमरा है जिसमें नास्ता-पानी, गपशप सब चलता है। कमरे में एक बडी सी चौकी है, जो आधी किताबों से भरी रहती है। आधी में स्याही के और कभी कभी कत्थे के दाग लगी चादर पडी रहती है। यही साहित्यकार का कारखाना है। इसी कमरे में सहज भाव से गले में माला डाले, लुंगी-बंडी में बैठे हुए डाक्टर साहब को देखा जा सकता है, नगर नहीं ग्राम जीवन की सहजता के आयाम जिस आसनपर पूजा हुई उसी पर हजामत, नाश्ता, चाय, समाचार पत्र भी वहीं बैठकर पढा गया। साहित्य-सृजन, चिन्तन अध्ययन से लेकर घर गृहस्थी के प्रबन्ध मिलनेवालों का तांता, चर्चा हर प्रकार की गप्पे शोध छात्रों को निर्देश, पात्र लगा तो ठहाके भी। सब उसी आसनपर सहज सातत्यपूर्वक।

इसी कमरे में अरविन्द और माताजी का छोटा रंगीन चित्र लगा है, कहीं लोककला के चित्र साथ में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का चित्र। इसके अतिरिक्त दीवारोंपर विवेकानन्द, रामकृष्ण परमहंस और शिवप्रसाद सिंह के चित्र लगे हैं। आजकल तीन नये चित्र और लगे दिखायी देते है - डाक्टर जी की एकमात्र सुपुत्री मंजुश्री का, रुसी कहानीकार "चेखव" का और

विद्रोही कवि निराला का चित्र । इस प्रकार पूरा ड्राइंगरूम पूर्व एवं पश्चिम का एक अद्भुत संयोग प्रस्तुत करता है।

३) अभिरुचियाँ -

डा॰ शिवप्रसाद सिंह जी के अभिरुचि में सर्वप्रथम स्थान पुस्तके पढना और इसके लिये पुस्तकालय को हाजिरी लगाना । आपका वास्तविक अध्ययन क्षेत्र साहित्यिक सीमा में आता है। नये-पुराने किसी भी लेखक का लिखा गया साहित्यिक आपके स्वाध्यायका विषय हो सकता है। पाश्चात्य और पौर्वात्य दोनों प्रकार के साहित्य और साहित्यकारों के प्रति आपमें आस्था और अनुराग है तथा आपके साहित्य समीक्षा में इनके प्रौढ, सम्यक एवं विस्तृत अध्ययन का प्रतिफलन विद्यमान है। साहित्य के अतिरिक्त इतिहास दर्शन ज्योतिष, गणित आदि विषयों में भी गहरी अभिरुचि है। अध्यात्म एवं दर्शन के प्रति लगाव के कारण आपने श्री अरविन्द, आचार्य रजनीश और अस्तित्ववाद का गहरा अध्ययन अनुशीलन किया है। तथा "उत्तरयोगी श्री अरविंद एवं आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद" जैसी उच्चस्तरीय पुस्तकों का प्रणयन भी किया है। इन्हें लिखने-पढने के लिये सन्नाटा चाहिए - चाहे वह रात में मिले या चिलचिलाती लु भरी दोपहरी में। वैसे रात को ही अक्सर वे अध्ययन करते और लिखते है। कभी कभी सारी रात। इसी का परिणाम है कि सुबह देर तक दिन चढ जाने पर भी आपको सोते रहने की आदत पड गयी है। जो साहित्यिक परम्परा के मेल में भले ही हो अपने "सुप्रभात" के लिये प्रसिध्द सांस्कृतिक नगरी काशी की परम्परा के अनुकूल नहीं है।

अध्ययन के अलावा गंगा के किनारे टहलना, घाटों पर चुपचाप बैठना, बागवानी और भ्रमण का भी आपको काफी शौक है। पान खाना एक खास बनारसी आदत है। बैठक में तरन्त पर बैठते है। थोडी-थोडी देर

में बगल में रखे हुए पानदान को खींच कर पान लगाते है। सामने वाले की तरफ एक बीडा बढाने के बाद खुद विशुध्द "बनारसी रंग" में पान जमाकर इत्मीनान से बैठ जाते है।

४) अध्ययन क्षेत्र -

कथा साहित्य में आने के पूर्व आप एक गंभीर शोधार्थी माने जाते थे आपका एम॰ए॰ परीक्षा के लिये प्रस्तुत किया गया लघु-शोध-प्रबन्ध "कीर्ति लता और अवहट्ट भाषा" है। इसमें पहली बार कीर्तिलता की भाषा का विश्लेषण करके उसका परवर्ती अपभ्रंश के क्षेत्र में महत्व सिध्द किया है। विद्यापति की "तं तैसन जपनो अवहट्ट" उक्ति की प्रामाणिक वास्तविक और तार्किक व्याख्या की विद्वानोंने बडी चर्चा और सराहना की। पीएच॰डी॰ के शोध प्रबन्ध - "सूर पूर्व ब्रज भाषा और उसका साहित्य" में, विविध ज्ञात अज्ञात भण्डारों से सूर पूर्व ब्रज भाषा की सामग्री ढूंढकर और उनका भाषा और साहित्य की दृष्टि से परीक्षण करके एक तर्क सम्मत मत का प्रतिपादन पांडित्यपूर्ण ढंग से किया गया है।

५) राजनैतिक लगाव और दार्शनिक प्रभाव :-

राजनीतिक क्षेत्र में शिवप्रसाद सिंह का लगाव लोहिया जी से कभी था। पर अब न लोहिया है और न वह पार्टी, इसलिये उधर से वितृष्णा हो गयी है। आज की राजनीतिक स्थिति के लिये "दमघोटू" के प्रयोग को सर्वथा उचित मानते हैं।

दर्शन और चिन्तन के क्षेत्र में श्री अरविन्द और अस्तित्ववाद ने इन्हें प्रभावित किया है। अरविन्द दर्शन के आकर्षण को स्वीकारते हुए आप कहते हैं - "मैं विश्वास करता हूं कि मानव की यात्रा निरंतर ऊर्ध्वगामी

रही है। अरविन्द ने मुझे एक ऐसे नये लोक का दर्शन कराया जिसमें एकान्तवास को सार्थक बनाने का उपास मालूम हुआ। पहले मैं अस्तित्ववादियों से बहुत प्रभावित था। वह अजनबीपन का बोध खालीपन का एहसास अरविन्द दर्शन से दूर हो गया। मैं अरविन्द दर्शन को साम्प्रदायिक दृष्टि से नहीं देखता और न केवल उनके सम्प्रदाय का कोई अंग ही हूँ। मेरे लिये वे एक चिन्तक के रूप में संग्रहणीय है।" [४]

इन्होंने अस्तित्ववाद को गहराई से पढ़ा है। उसकी अच्छाई बुराई दोनों से पूर्ण वाकिफ है। क्षमता और सीमा से भलीभाँति परिचित है। अस्तित्ववाद का उनका ध्येय नहीं है पर उससे उन्होंने कुछ सीखा भी है इसीलिए उनकी कहानियों में अस्तित्ववाद आत्मनिर्वासन के रूप में आया है।

जहाँ तक व्यक्तिगत मान्यताओं का सवाल है डाक्टर साहब में कोई पूर्वग्रह नहीं है और न कोई राजनीतिक मतवाद ही। ऐतिहासिक विकास और भारतीय परम्परा में आधुनिक वैज्ञानिक जीवन की जो मान्यताएँ है उनका उचित समाधान ढूंढते हुए व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का जीवन उन्हें पसन्द है। वही कभी बहुत एकान्त हो जाता है।

निष्कर्ष :

डा॰ शिवप्रसाद सिंह के व्यक्तित्व का अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकलता है कि उनका जीवन अनेक समविषम घटनाओंसे सम्मिलीत है। सिंह जी का जन्म परम्परागत संस्कारशील संभ्रांत मध्यमवर्गीय कृषक परिवार में होने के कारण साथ ही माँ बाप से जादा दादी माँ का प्यार मिलने के कारण प्रारंभिक जीवन में किसी भी प्रकार की कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ा।

सिंह जी प्रारंभ से ही कुशाग्र बुध्दी के कारण शिक्षा में निरंतर विकास करते रहे लेकीन संयुक्त परिवार टुटने के डर से शिक्षा में निरंतर आर्थिक बाधाएं आयी और कई बार पढाई छूटते छूटते बच गई। शायद इसी डर के कारण आज भी उनकी दीमागी बनावट ही इस तरह की बनी है कि वह किसी के साथ खुलकर दूसरों के सामने आपना दुःखदर्द कभी स्पष्ट नहीं करते।

सिंह जी का वैवाहिक जीवन सुख्शांतिसे बितने के बाद भी प्रारंभ सेही अध्ययन में रुचि और हर विषय को परखकर लेने की आदत से ही उन्होंने पारिवारिक जीवन की तरफ उतना ध्याननहीं दिया जितना साहित्य और अध्ययन में देते थे।

शायद इन्हीं परंपरागत संस्कारशील वृत्ती के कारण और प्रारंभिक जीवन ग्रामीण परिवेशमें पहने के कारण घरका वातावरण ग्रामीण और परम्परागत संस्कारों से भरा हुआ है। साथ ही उनका पूरा व्यक्तित्व सुसंस्कृत बनाने के लिए साहित्यिक और मित्रोंके साथ साथ माता पिता परमपिता के सहयोग के कारण उनका पूरा व्यक्तित्व सुसंस्कृत बन पड़ा है।

## डा॰ शिवप्रसाद सिंह जी का कृतित्व :

शिवप्रसाद सिंह पचासोत्तर हिन्दी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर है। और बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार है। शोध समीक्षा सृजन चिंतन दर्शन आदि सभी क्षेत्रों में उनकी प्रतिभा सर्वविदित है, पर वे मूलतः कथाकार है।

डा॰ सिंह जी के कथा सृजन का मूल क्षेत्र ग्रामीण जीवन है। असल में प्रेमचंद के बाद हिन्दी साहित्य में ग्राम-जीवन प्राय: लुप्त हो

गया था। आज़ादी के साथ उभरी जिस नयी पीढ़ी ने इस रिक्तता को भरने की सार्थक कोशिश की डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह का नाम उसमें अग्रगण्य है। साहित्य में विस्तृत जीवन वास्तव के कारण तत्कालीन संदर्भों को प्रेमचंद गाँव के जिस उपेक्षित अंश को अपना संवेदनात्मक संस्पर्श नहीं दे सके थे और तमाम नारो आन्दोलनों के प्रवाह में वह पीढ़ी भी जिनतक नहीं पहुँच पा रही थी, उस दलित मानव समाज - नटों, मुसहरों, कुजड़ों, डोमों, चमारिरों आदि के दुःख-दर्द को शिवप्रसाद सिंह की लेखनी ने पूरी सजगता और संजीदगी के साथ व्यक्त किया। साथ ही साथ प्रेमचंद के जमाने में शोषण की प्रक्रिया बड़ी साफ और सीधी थी लेकिन आज़ाद भारत में जमींदारी व्यवस्था खत्म हो जाने के बाद उसमें बड़ी पेंचें आ गयी, सामाजिक व्यवस्था और स्तर बदल जाने से उसकी प्रक्रिया भी काफी जटिल हो गयी। इस स्थिति को पकड़ पाने के लिए एक नयी दृष्टि तो चाहिए ही, उसे व्यक्त करने के लिये नये सिरे से प्रस्तुतीकरण की जमीन भी खोदनी थी शिवप्रसाद जी ने इन तमाम ऐतिहासिक जरूरतों को समझते हुए बड़ी सूझ बूझ के साथ इन्हें तदनुरूप अंजाम दिया।

## शिवप्रसाद जी के साहित्य का परिचय :

### कहानीकार शिवप्रसाद सिंह जी -

बीसवी शताब्दी के मध्य से हिन्दी कहानी में एक बदलाव आया। कहानी के इस बदलते हुए स्वरूपने नवीन जीवन दृष्टि, नया आधुनिक बोध एवं नये शिल्प के कारण सबका ध्यान आकृष्ट किया। इस बदलते हुए स्वरूपने कहानीकारों को भी और कहानियों को भी नया मोड़ दिया और ग्रामजीवन अथवा भारतीय कृषक जीवन को लेकर लिखी कहानियों का सिलसिला शुरू हुआ। इसी सिलसिले मे शिवप्रसाद जी की कहानी "दादी माँ" का उल्लेख किया जाता है। जो सन १९५१ के प्रतीक" में छपी थी। वस्तुत: शिवप्रसाद

जी की कथायात्रा का प्रारंभ यहीं से होता है। इनकी सबसे पहली कहानी "दादी माँ" अक्तूबर, १९५१ के "प्रतीक" में पहलीबार प्रकाशित हुई और दूसरी "बरगद का पेड" मार्च, १९५२ में। "दादी माँ" ग्राम जीवन की पहली कहानी थी जिसमें नीजी अनुभव और भोगे हुए अन्य की व्यथा को व्यक्त किया गया है। यह गाँव के उस वातावरण की प्रतिनीधि रचना है, जहाँ दीनता विपन्नता और अन्धविश्वास की जडे गहराई में जमी है॥ गरीबी और गन्दगी उसे खाद देती है, किन्तु पारिवारिक स्नेह, सघन विनोद और प्रकृति की सुषमा इसमें प्रसून की तरह खिला करती है।

"दादी माँ" जैसी सांस्कृति, स्नेह संवलित मातृत्व – समृध्द श्र श्रध्दाशील और पावन ग्राम माताएँ एक पीढी है, जो, शनैः शनैः असंगत हो रही है। इसी प्रकार बरगद का पेड" ने अपने सदय अछूते मितात्मा मौलिक और नवीन शिल्प सौन्दर्य के कारण लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है। अपनी इन प्रारंभिक कहानियों से ही शिवप्रसाद सिंह एक कहानीकार के रूप में बहुपर्चित और बहुप्रशंसित हो उठे। सिंह जी ने हिन्दी कहानी साहित्य को जिन कहानीयों की देन दी है वे कहानियाँ निम्न प्रकार की है।

| | | |
|---|---|---|
| १) | आर पार की माला | – १९५५ |
| २) | कर्मनाशा की हार | – १९५८ |
| ३) | इन्हें भी इन्तजार है | – १९६१ |
| ४) | मुरदा सराय | – १९६६ |
| ५) | अँधेरा हँसता है | – १९७५ |
| ६) | भेडिए | – १९७७ |
| ७) | मेरी प्रिय कहानियाँ | – १९७७ |

## शिवप्रसाद सिंह जी की कहानियोंका संक्षिप्त परिचय -

### १) आर पार की माला -

"आर पार की माला" सिंह जी के सन १९५१ से १९५३ तक की प्रारंभिक कहानियों का पहला कहानी संग्रह जून, १९५५ में सरस्वती मन्दिर, जतनवर, काशी से प्रकाशित हुआ। इसमें -

(१) नयी पुरानी तस्वीरें
(२) बरगद का पेड
(३) हीरो की खोज
(४) महुवे के फूल
(५) दादी माँ
(६) देऊ दादा
(७) मंजिल और मौत
(८) मास्टर सुखलाल
(९) कबूतरों का अड्डा
(१०) उस दिन तारीख थी
(११) पोशाक की आत्मा
(१२) पितकबरी
(१३) उसकी भी चिठ्ठी आई थी
(१४) मुर्गे ने बाँग दी
(१५) उपधाइन मैया
(१६) आर पार की माला

आदि सोलह कहानियाँ सम्मिलित है। इसमें गांधीवाद और आदर्शवादी प्रभाव के अमुक्त अमोहभंग की स्थिति का उत्तर जमींदार युग स्थापित हुआ है। जहाँ आधुनिकता अभी आँख खोल रही है। शिवप्रसाद

सिंह मूलत: गाँव के ही कथाकार है। गाँव का परिवेश इनकी अनुभूतियों का भण्डार है और उसमें इनका रागात्मक लगाव है। शायद इसी लिए इनकी इस कहानीमें स्थानीय रंग बटोरने और उसमें कहानियों को रंगने, संवारने के लिये इन्हें कठिन आयास नहीं करने पड़े, जिससे इनके चित्रण एक अनावश्यक कृत्रिमता से मुक्त है। "बरगद का पेड़" कहानी को छोड़कर शेष सभी कहानियाँ आंचलिकता से मुक्त है। आंसू और हंसी के धूपछाहीं परिधान में लिपटी इन कहानियों में गाँव की जिन्दगी रोती ही नहीं मुस्कराती भी है। सच तो यह है कि यही इस कथाकार की विशिष्ट प्रकृति है। इन कहानियों में अनुभूतिजन्य सच्चाई और गहराई का समावेश ही इनकी सर्व प्रमुख विशेषता है। एक भी कहानी में यह नहीं लगता कि कहानीकार महज किसी कल्पित कथानक को सजा संवार प्रस्तुत कर रहा है।

इस संग्रह की "दादी माँ" कहानी तो ऐतिहासिक महत्व रखती ही है, "बरगद का पेड़", "महुवे के फूल", उसकी भी चिठ्ठी आई थी", तथा "आर पार की माला" कहानियाँ भी अपने अछूते शिल्प सौन्दर्य के लिए बहुत दिनों तक याद की जाएंगी। इनको इस दृष्टि से पढ़ने का आग्रह भी लेखक ने स्वयं किया है। "नयी पुरानी तस्वीरे" और "उपधाइन मैया" में ग्राम जीवन की सांस्कृतिक सहजता, सौम्यता से केन्द्रित है। प्रेम, वात्सल्य वृध्दत्व, मातृत्व और सेवापरायणता की त्याग मूर्तियों के रूप में ये चित्र अपनी सूक्ष्म ग्रामगंधीय विशेषताओं से सम्पन्न चित्रित किये गये है। इसी तरह "दैउ दादा" में भी आदर्शवादी उभार सांस्कृतिक अधिक है।

कबीले या उपेक्षित जनसमूह के चित्रण से "नयी कहानी" में संवेदना का जो नया आयाम खुला था उसका प्रमाण "आर पार की माला" कहानी में देखा जा सकता है जिसमें नट जैसी उपेक्षित जाति के जीवन का यथार्थ और प्रामाणिक चित्रण किया गया है।

२) कर्मनाशा की हार -

शिवप्रसाद जी की १६ कहानियों का दूसरा संग्रह "कर्मनाशा की हार" है जो १९५८ में प्रकाशित हुआ। ये सोलह कहानियाँ निम्नलिखित है -

१) कर्मनाशा की हार
२) प्रायश्चित
३) पापजीवी
४) केवड़े का फूल
५) बिंदा महाराज
६) कहानियों की कहानी
७) वशीकरण
८) उपहार
९) संपेरा
१०) भग्न प्राचीर
११) शहीद दिवस
१२) हाथ का दाग
१३) माटी की औलाद
१४) गंगा - तुलसी
१५) बिना दिवार का घर
१६) रेती

यही वह कहानी है जिसके जरीये सिंह जी ने अपनी कहानी यात्रा की प्रतिभा उजागर की है। इस कहानीसे वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से प्रगति की है। इन कहानीयों में एक ओर जहाँ वस्तु और भाव की नवीनता है, वही शैली में नया सौन्दर्य और अर्थपूर्ण कलाकारिता के दर्शन होते है। इसी कहानी के जरीये सिंह जी को उच्च श्रेणी के कथाकारों में स्थापित किया गया है।

इस संग्रह की भूमिका में लेखक ने मनुष्य के जीवन के प्रति अपनी प्रतिबध्दता इस प्रकार स्पष्ट की है - "मनुष्य और उसकी जिन्दगी के प्रति मुझे मोह है, जो अपने अस्तित्व को उबारने के लिये विविध क्षेत्रों में विरोधी शक्तियों से जूझ रहा है। अन्धविश्वास उपेक्षा, विवशता, प्रताडना, अतृप्ति, शोषण, राजनीतिक भ्रष्टाचार और क्षुद्र स्वार्थान्धता के नीचे पिसता हुआ भी जो अपने सामाजिक और मनोवैज्ञानिक हक के लिए लडता है, हँसता है, रोता है, बार-बार गिर कर भी जो अपने लक्ष्य से मुँह नहीं मोडता वह मनुष्य तमाम शारीरिक कमजोरियों और मानसिक दुर्बलताओं के बावजुद महान है।" [5]

कहानी में प्रवाहित यह जीवन की शक्ति ही आज की कहानी के प्रति पाठक को आस्थावान बनाती है।

"पावजीवी" शीर्षक कहानी में उपेक्षित मुसहर जाति के कालीसे की दो पीढियों के दर्द को अच्छी तरह उभारा गया है। उसी प्रकार "उपहार" और "संपेरा" में भी क्रमशः कथाकार ने गुलाबी चमाईन और बक्स नट को चित्रित किया है। इन चित्रों मे बारंबार कथाकर उनके मानवीय पक्ष को उभारता है और लगता है कि जैसे हाड-मास के महत्वाकांक्षी मानव हम है उसी प्रकार वे भी है। यह सामाजिक और आर्थिक वैषम्य कुण्ठा है। संपेरा में यह संवेदना है कि संपेरा सहानुभूति से प्रेरित है उस व्यक्ति के प्रति भी जो उसकी पत्नी का हत्यारा है। एक कबीले के हृदय को दिखाने के लिये इसमें अंध विश्वास का प्रयोग किया गया है। "माटी की औलाद" में टिमलकुम्हार की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ जबकी पुरानी गुलाम व्यवस्था के स्थान पर नयी स्वतन्त्र व्यवस्था आ गयी है। नयी व्यवस्था का नया भ्रष्टाचार उसके सिर पर घहराता है। "गंगा तुलसी" आज भी गाँव में पूर्ण रूपसे असुरक्षित है। "विंदामहाराज" एक सहज यथार्थ बोध की कहानी है। विंदामहाराज एक पुरे वर्ग का प्रतिनिधी है जिसके प्रति समाज की संवेदनशील दृष्टि क्या मोडलेगी यह एक चिरन्तन प्रश्न चिन्ह है।

"विदामहाराज" और "प्रायश्चित" में जो दर्द है उससे सारी मनःस्थिति खिल उठती है। "केवड़े का फूल" में जो प्रतीकात्मक व्यंजना है, वह मन को बहुत अपील करती है और बड़े प्रश्न की ओर संकेत करती है।

कर्मनाशा की हार" अत्यन्त प्रसिध्द कहानी है जो इस लोक विश्वास पर उभरती है कि नदी की बाढ हमेशा मनुष्य की बलि लेकर उतरती है जो एक व्यक्ति के संघर्ष की कहानी है, जो अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये विविध क्षेत्रों में विरोधी शक्तियों से जूझ्त रहा है। कहानी का प्रमुख पात्र भैरू पाण्डेय ऐतिहासिक शक्ति का प्रतीक मालूम होता है।

३) इन्हें भी इन्तजार है -

शिवप्रसाद जी का तीसरा कहानी संग्रह "इन्हें भी इन्तजार है" १९६१ में प्रकाशित हुआ। इसमें बीस कहानियाँ सम्मीलित है -

| | |
|---|---|
| (१) नन्हों | (२) बेहया |
| (३) महल्ला | (४) इन्हें भी इन्तजार है |
| (५) टूटे तारे | (६) सुबह के बादल |
| (७) आखिरी बात | (८) बहाववृत्ति |
| (९) धूल और हँसी | (१०) शाखामृग |
| (११) परकटी तितली | (१२) खेल |
| (१३) पेटमैन | (१४) टूटे शीशे की दीवार |
| (१५) खेरा पीपल कभी न डोल | (१६) कर्ज |
| (१७) अन्धकूप | (१८) अधूरे का फूल |
| (१९) आँखें | (२०) बीच की दीवार |

ये कहानियाँ भी लगभग उसी राजनैतिक सामाजिक परिवेश की उपज है जिसमें "कर्मनाशा की हार" संग्रह की कहानियाँ लिखी गयी। इस संग्रह की कहानियाँ शिल्प की अभिनवता और मनोवैज्ञानिक चित्रण की दृष्टि से पहले

लिखी कहानियों से अधिक सशक्त प्रौढ और मार्मिक है। साथ ही साथ प्रत्येक कहानी में एक मीठा परन्तु चुटीला व्यंग्य मिलता है।

"नन्हों" में कथाकार ने बडे ही सूक्ष्म एवं मार्मिक कथा प्रसंग को चुना है। "नन्हों" नारी के स्नेह, ममता, त्याग और वेदना का जीवन्त विग्रह है। कथा का अन्त हृदय को झकझोर देनेवाला है। नन्हों जैसी कितनी नारियाँ समाज की तमाशाबाजी का शिकार होकर घुट-घुटकर जीवन बिता रही है। "बहाववृत्ति" का बिहारी रसिक मन होनेके कारण साधु तक बन गया परन्तु "मझले भाई" जैसे लोग कभी ऐसे व्यक्तियों को टिकने नहीं देते। पता नहीं कितने बिहारी आज भी समाज की सरिता के किनारे खडे किये गए उस खम्भे की तरह अपना जीवन बिता रहे हैं। "वेश्या", "टूटे तारे" और "अन्धकूप" वेश्या जीवन के अभिशाप से सम्बन्ध और "आँख" में सामाजिक अन्याय के साथ यौन-नैतिकता को जोड दिया गया है। "इन्हें भी इन्तजार है" इस संग्रह की श्रेष्ठ कहानी है। यह कबरी नामक डोम के लडकी के संघर्षमय और हृदय विदारक दुःखान्त जीवन की करुण कथा है। कबरी के बचपन, यौवन और पागलपन के तीनों चित्र बडे ही जीवन्त बन पडे है। सम्पूर्ण कथा एक चलचित्र की भाँति चलती है। एक सामान्य नारी की अति सूक्ष्म, मनोवैज्ञानिक और गहरी मानवीय सहानुभूति से संचालित यह चित्र सुन्दर शिल्प का सहारा पाकर निखर उठा है।" [6]

"शाखामृग" में लखी लाल के माध्यम से एक ऐसे व्यक्ति के जीवन की मनोरंजक झाकियाँ दी गयी है जो किसी एक काम को मनोयोगपूर्वक नहीं करता। इस कहानी के व्यंग्य चित्र सुन्दर बन पडे है। "शाखामृग" का स्मित हास्य हिन्दी साहित्य में दुर्लभ है।" [7] बीच की दीवार" में दो भाईयों के मनमुटाव, अलगौंठि और अपने "बोहीमियन" अनुज के प्रति अग्रज के अपार स्नेह की सुखान्त कथा है। "हैरा पीपल" कभी न डोले" में एक व्यंग्य है। समझा जाता रहा है कि हैरा पीपल यह सनातन सांस्कृतिक बाँध है और वह सर्वथा अपरिवर्तनीय है परन्तु देखते देखते गाँव की आकृति चूडान्त बदल गई। कहानी का एकचित्र दृष्टव्य है - "हैरा चला तो

उसके सामने आज कोई बूढ़ा पीपल नहीं था, चाय की दूकान थी जहाँ कुछ देर खड़े होकर वह गाँव को देखता रहा। फिर बस आई तो कैरा ने पहली बार सबको हाथ जोड़कर नमस्ते किया और बस में बैठ गया।" 6 "बीच की दीवार" में एक नया "मूल्य विघटन" के रूप में उभरता तो अवश्य है, परंन्तु वह प्राचीन भ्रातृप्रेम के आगे प्रभावहीन हो जाता है॥

"मरहला", "सुबह के बादल", परकटी तितली", "खेल" और पैटमैन" में भावुकता का पुट उन्हें जीवन की उष्मा प्रदान करता है। "मरहला" में खुनखुन नामक एक मरहलेदार की कर्तव्यनिष्ठा गूंगा के साथ विवाह, उसका भाग जाना और अन्त में बुढ़िया की गाय को कटने से बचाने के लिए अपने प्राणों को जोखिम में डालना आदि का बारीकी के साथ चित्रण किया गया है। "आखिरी बात" शीर्षक कहानी में फुलन मिया आर्थिक चपेट के कारण घोर अतीतजीवी हो जाते है। "धतूरे के फूल" में यौन चेतना है तो "धूल की हँसी" सामान्यस्तर की कहानी है, "टूटे शीशे की तस्वीर" उस जापानी कहानी की याद दिलाती है। जिसमें अपने बेटे की मृत्यं का समाचार देते हुए माँ के चेहरे पर निर्विकार शिष्टता बनी रही, लेकिन हाथ का रूमाल चिन्ही-चिन्ही हो गया।" 9 "परकटी तितली" में शिल्प की कमजोरी उसके प्रभाव को क्षीण कर देती है। "सुबह के बादल" इस कहानी में आधुनिक ग्राम कथा का प्रामाणिक स्वर बेजोड़ रूप से दिखायी देता है।

४) मुरदा सराय -

शिवप्रसाद सिंह का चौथा कहानी संग्रह "मुरदा सराय" सन १९६६ में भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ है। इसमें कुल बारह कहानियाँ है -

(१) ताडी घाट का पूल (२) अरून्धती
(३) मैं कल्याण और जहाँगीरनामा (४) प्लॉस्टिक का गुलाब
(५) किसकी पाँखें (६) धारा
(७) चेन (८) अँधेरा हँसता है।
(९) जंजीर फायर ब्रिगेड और इन्सान (१०) एक यात्रा सतह के नीचे
(११) मुरदा सराय (१२) तकावी

"इसमें आधुनिकता बोध का सम्यक विस्फोट हुआ है। और विक्षोभ तीखापन, तनाव और कड़वाहट चरम सीमा पर पहुँच गयी है।" [१०] "ताडी घाट का पुल" और "अरून्धती" शीर्षक प्रारम्भिक कहानियों में समाज और इकाई के बीच का संघर्ष उभारा गया है। लेखक की धारणा है कि, "समाज आचरण मूलक सत्यों का हिमायती होना है, जबकि इकाई अपने भोगे हुए अनुभव और उभार हुए सत्य को पाकर भी भुला नहीं सकती। यह संघर्ष एक प्रकार से दोनों के एक दूसरे के प्रति पिट बैठने का प्रयत्न का ही रूप होता है।" [११] "अरून्धती में लोग कलात्मक ताने बाने का उपयोग उसकी प्रभावस्थिति को तीव्र कर देता है। अरून्धती और हीरा की मूककथा को पुस्ला की कथा वैषम्य से अर्थवान बनती है। पुस्ला की कहानी में प्रेम की सफलता प्रत्यक्ष है, पर अरून्धती की कहानी में हीरा का बाँसुरी बजाना, सोचना ही संभव नहीं हो पाता और वह अपने प्राण से हाथ धो बैठता है।

"मैं कल्याण और जहाँगीर नामा" तथा "प्लॉस्टिक का गुलाब" कहानियों में बदलते प्रेम सम्बन्धों को समेटा गया है जो आधुनिकता की विकट समस्या है। "किसकी पाँखें" चरित्र प्रधान कहानी है, जिसका मुख्य स्वर हिन्दू मुसलमान - दोनों सम्प्रदायों की एकता का है। इस कहानी का अशरफ चाचा धर्म-निरपेक्षता को सत्तारूढ़ करने एवं भारत फैली हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता की भावना को मिटाने के लिये छटपटाती एक भावना है। कहानी के "मैं" के लिये धर्म एवं मजहब प्रश्न चिन्ह है। इसलिए वह आज तक यह नहीं समझ पाया है कि ये किसकी पाँखें हैं - परी की या फिरिश्ते की ?

इसी तरह "चैन" कहानी का रिक्शावाला वह जिन्दगी है, जिसे अर्थाभाव कभी चैन नहीं लेने देता। चैन तो मात्र प्रतीक है उस विवशता का जो इन शब्दों में व्यक्त है - "वह ऐसे ही उतरती रहेगी और हम इसे ऐसे ही चढाते रहेंगे, है कि नहीं ? "[१२]

"धारा" कहानी चरित्र प्रधान है। स्वयं लेखक के शब्दों में - "इसमें एक प्रमुख चरित्र है तिहरा। गाँव से दूर एक जंगली धरती के छोर पर झोपडियों में रहनेवाले एक आदिम संस्कृति के भग्नावशेष परिवार की लडकी। मुसहर, कंजड, या ऐसा ही कुछ। "[१३] कहानी में तिहरा का चरित्र ही मूल्य है और आधुनिक संस्कृति की धारा में पडे द्वीप की तरह है। वह आदिम संस्कारों की धरती पर स्थित है जिसे हमारी आधुनिक सभ्यता हलफाल लेकर तोड रही है। जंजीर फायर ब्रिगेड और इन्सान" कहानी आधुनिक युग में पूँजीवादी शोषण पर प्रहार करती है। नौकरी वह शोषित वर्ग है जिसकी कीमत पैसे से कम रहती है। जलते घर में नौकरी बडे बाबूक का कोट निकाल कर लाता है और स्वयं जल जाता है किन्तु इस जले हुए नौकर को अस्पताल ले जाने के लिए कोई तैयार नहीं होता वह कार्य एक रिक्शा वाला करता है। इस बुढे रिक्शावाले में भी दया, ममता चित्रित की गयी है।

आज के जमाने में बेकारी और अर्थ समस्याने परम्परागत पारिवारिक सम्बन्धों को बुरी तरह तोड कर रख दिया है। यह बात जितनी शहरी जिन्दगी के लिये लागू होती है उतनी ही ग्रामीण जीवन के लिये भी। "एक यात्रा सतह के नीचे" का अवधूम अपनी बेकारी के कारण बदली अपनी पारिवारिक स्थिति का शिकार है जिसे सह पाना उसके लिये ही नहीं उसकी पत्नी के लिये भी कठिन है।

इस संग्रह की शीर्षक कथा - "मुरदा सराय" में केंद्रीय तत्व संत्रास है। इसमें जीवन-बोध बनाम मृत्युबोध बनाम संवेदित है। इस कहानी में

जीवन का प्रतीक घर है और मृत्यु का प्रतीक श्मशान है। "मुरदा सराय" दोनों के बीच में है जहाँ वीभत्स भयानक की सृष्टि के साथ संवेदनीय सूक्ष्म श्रृंगार स्थिति का सामंजस्य है जिसे कथाकार ने स्पष्ट किया है।

५) <u>अंधेरा हँसता है</u> -

लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वारा १९७५ में प्रकाशित "अंधेरा हँसता है" डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह जी का पाँचवा कहानी संग्रह है। इसमें सिंह जी की चुनी हुई १८ कहानियों का संकलन है जो उनके २५ वर्षों के लेखन की साक्षी रही है। इसमें "आर-पार की माला" से दो (महुये के फूल, माँडील और मौत) "कर्मनाशा की हार" से दो (पापजीवी, केवड़े का फूल) "इन्हें भी इन्तजार है" से ग्यारह (नन्हें, मरहला, अंधकूप, सुबह के बादल, बहाव वृत्ति, बीच की दीवार, केरा पीपल कभी न डोले, आँखें, पेटमैन, शाखामृग तथा कर्ज) तथा "मुरदा सराय" से तीन (एक यात्रा सतह के नीचे, ताड़ीघाट का पुल, अंधेरा हँसता है) कहानियाँ ली गयी है। उपर्युक्त सभी कहानियों की चर्चा क्रमवत सभी कहानियों में की गयी है।

६) <u>भेड़िए</u> -

डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह जी की दस लोकप्रिय कहानियों का यह संकलन नेशनल पब्लिशिंग हाउस नयी दिल्ली से महाशिवरात्रि के शुभ अवसरपर १९७७ में प्रकाशित हुआ। इसकी कहानियाँ निम्नांकित है -

| | |
|---|---|
| (१) कलंकी अवतार | (२) बड़ी लकीरें |
| (३) भेड़िए | (४) बेजुबान लोग |
| (५) हत्या और आत्महत्या के बीच | (६) एक वापसी और |
| (७) राग गुजरी | (८) "तो . . . ." |
| (९) धरातल | (१०) आदिम हथियार |

इस संग्रह की कहानियाँ कथा वाचन के परम्परागत रेशमी ताने बाने को झटके के साथ तोड कर, एक खुरदुरे पर जीवन्त यथार्थ के आमने सामने पाठकों को खडा करने की एक इमानदार कोशिश है। स्वयं लेखक के शब्दों में, - "कहानी पिछले दशक में जिस प्रकार के दौर से गुजर रही है, उसे तो कुहाच्छन्न काल ही कहा जा सकता है। मैंने तथ्य-विहीन फैशन के नामपर नाना "लेबुलों" से विभूषित किन्तु सामाजिक यथार्थ से असंयुक्त ऐसी कहानियों से पूर्णतया नाता तोडने का प्रयत्न किया है।" [१४] लेखक इन कहानियों को अपनेही इससे पहले लिखी गयी कहानियों से अलग स्विकार करते हुए कहते हैं कि - "मुझे यह मानने में आपत्ति नही है कि मेरी पहले की कहानियों में स्माश्रयी स्काने ज्यादा थी। पर उनके स्थान पर सपाट बयानी और सामाजिक यथार्थ की चुभन ज्यादा स्पष्ट होकर उभारी है।" [१५]

प्रस्तुत संग्रह की प्रथम और अन्तिम कहानी क्रमशः "कलंकी अवतार" और "आदिम हथियार" को प्रमुख ग्रामभित्तिक कहानियाँ कही जायगी। "कलंकी अवतार" एक गरीब आदमी की कहानी है जो बडे लागों की खिदमत में सालों रहकर भी उनके अत्याचार और शोषण का शिकार बनता है और इस अन्धविश्वास के साथ जी रहा है कि एक न एक दिन अवश्य कल्कि का अवतार होगा और वह शोषकों का सिर धड से अलग कर देगा। पर एक दिन जिसे वह कल्कि का अवतार समझ बैठता ही वह उनके शोषक का ही मेहमान निकलता है।

"आदिम हथियार" में श्यामलाल बीसों होशियारों की ग्रामसभा की अन्धी भीड को "ठेंगा" दिखाकर ही उनके जालफरेब से मुक्ति पाता है। इसमें नयी पीढी की झूठी क्रांति का पर्दाफाश किया गया है। "बडी लकीरें" में आज के गाँव की "अंतडी" का चित्रण है। कहानी का पात्र "मै" प्रारम्भ में ही कहता है - "सुना था बडी कचहरियों में ही किच-किच होती है। बडे बडे दफ्तरों में अंधी सुरंगे हैं। बडी कुर्सियों पर बैठने वाले ही टाल मटोल के मास्टर है, पर इस विलेभर की गाँव-सभा भी ऐसी अंतडियों भरी होगी इसका मुझे गुमान न था।" [१६] "बेजुबान लोग" में "सज्जन - सज्जनता" और

"दलजीत-लखिया" कथा प्रसंग की संश्लिष्ट दुहरी बनावट से बेजुबान लोगों की हकीकत प्रकट की है। "हत्या और आत्महत्या के बीच" आज की ज्वलन्त समस्या "दहेज" की है। दहेज और उसीसे प्रादुर्भूत अनमेल विवाह की आंच में झुलसती किसी युवती किसी आत्महत्यापर वह धुमला मत दिया गया है। "एक वापसी और" में उस "आकृति" को धुंधलके से बाहर लाने की आशंका युक्त लालसा व्यक्त की गयी है जिसकी आँखों में कप्तान नवाजादिक को युद्द-क्षेत्र में वापस भेजते समय एक अजीब तरह की "समझदारी विद्यमान है। वह समझदारी जो अम्मा की अतरता बहू की बदहवासी, कामता के भय, डालिये की गलति, झम्मन चौधरी की रहस्यमय सहानुभुति तथा टैंगरी सिंह के वहशियाना जोश से अलग है।

"राग गुजरी" में पगला बाबा और एक ममतामयी सामान्या के राग की स्निग्धता इकतारे की राग गुजरी की तरह वर्तमान है। "तो• • •" आज के पढे लिखे फरेबी युवक उदयी को उसके पिता पटवारी मुंशी जी अपनी डंडी दिखाकर रास्तेपर लाते है। मुंशी जी की बदली आँखों की रंगत को देखकर वह सिमट जाता है और कहता है "तो • • • तो • • • तो बाबू जी आप जैसा कहेंगे वैसा करुंगा।" [१७] यही नये पुराने की अमर के साथ न जोडने की बात भी सीधे-साधे कही गयी है। "धरातल" में बेसहारा विधवा को व्यापक स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया गया है। प्रस्तुत संग्रह में लेखक ने इमानदार के साथ आधुनिक दबाओं से जूझते हुए व्यक्तियों का लेखा जोखा प्रस्तुत करने का सार्थक, सोद्देश्य प्रयास किया है।

६) <u>मेरी प्रिय कहानियाँ</u> -

डॉ• शिवप्रसाद सिंह जी की प्रकाशित कहानियों में से दस चुनी हुई लोकप्रिय कहानियों का यह संग्रह राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली द्वारा १९७७ में प्रकाशित हुआ है। इसमें "आर-पार की माला" से एक (आर पार की माला) "कर्मनाशा की हार" से दो - (कर्मनाशा की हार, बिंदा महाराज) "इन्हें भी

इन्तजार है" से चार (नन्हों, सुबह के बादल, अन्धकूप और इन्हें भी इन्तजार है) "मुरदा सराय" में से दो (मुरदा सराय, धारा) तथा भविष्य कहानी संग्रह से एक (कलंकी अवतार) कहानी चुनी गयी है। उपर्युक्त सभी कहानियों की चर्चा इसके पहले सभी कहानी संग्रहोमें की गयी है।

उपर्युक्त सात कहानी संग्रहों का संकलन अन्धकूप (संपूर्ण कहानियाँ भाग १ )

एक यात्रा सतह के नीचे (संपूर्ण कहानियाँ भाग २)

अमृता (संपूर्ण कहानियाँ भाग ३) के तीन विभागों में "वाणी प्रकाशन" दरियागंज नई दिल्ली में प्रकाशित हो चुके है।

## उपन्यासकार सिंह जी :

डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह जी ने कहानीकार के रूप में ख्याती प्राप्त की है फिर भी एक महान उपन्यासकार के रूपमें भी उन्होंने अपना नाम रोशन किया है।

वर्तमान युग कथा-साहित्य का युग है ऐसे युग में कथा साहित्य अन्य रचनात्मक कला-विधाओं को पीछे छोडकर अपनी उन्नति की परम सीमा पर पहुँच गया है इसकी सिर्फ एक ही वजह हो सकती है कि - जिन्दगी के यथार्थ से जितना सटकर कथा साहित्य चल सकता है उतना नजदीक आने की शक्ति अन्य किसी विधा में नहीं है। फिरभी डॉ॰ सिंह जी ने कहानियों के साथ साथ उपन्यासो में भी उतनीही रूची रखी है शायद इसीलिए कि आज के बहुआयामी जीवन की वास्तविकता को उसके जटिल बहुस्तरीय सम्बंध-प्रसंगो को इतिहास की प्रक्रियामें मनुष्य की नियति के सार्थक समग्र आयाम को भाषा देने के लिये कहानी की उपेक्षा उपन्यास अधिक सक्षम है। साहित्यिक विधाओं में उपन्यास ही एक ऐसा अंग है जिसके माध्यम से मानवजीवन की

समस्त भावनाओं और चिन्ताओं को सामूहिक रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है। सिंह जी ने भी इस तथ्य को स्वीकार कर उपन्यास साहित्य को जिन उपन्यासों की देन दी है वे निम्नांकित है -

१) अलग-अलग वैतरणी - १९६७
२) गली आगे मुडती है - १९७४
३) शैलूष - १९८९
४) मंजुशिमा - १९९०
५) नीला चाँद - १९९३
६) दिल्ली दूर है - १९९३
७) औरत - १९९३
८) कुहरे में युध्द - १९९३

६

हिन्दी उपन्यास साहित्य को डॉ• शिवप्रसाद सिंह जी ने जिन उपन्यासों की देन दी है इन सभी उपन्यासों का विवेचन अगले अध्याय में विस्तार के साथ दिया गया है।

## डॉ• शिवप्रसाद सिंह जी का अन्य साहित्य :

शिवप्रसाद सिंह जी ने उपन्यास और कहानियाँ ही नहीं लिखी बल्कि अन्य गद्य साहित्य भी लिखा है। सिंह जी ने नाटक शोध समिक्षात्मक कृतियाँ, ललित निबंधो का संकलन, तथा सम्पादन का भी कार्य कीया है। साथ ही वे वैज्ञानिक रिपोर्ताज भी करते है।

सिंह जी ने नाटक विधा के रूपमें "घाटियाँ गूंजती है नामक नाटक लिखा है।

शोध समीक्षात्मक कृतियों के रूपमें आपने
१) कीर्तिलता और अवहट्ठ भाषा
२) सूर पूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य

३) विधापति

४) आधुनिक परिप्रेक्ष्य और नवलेखन

५) आधुनिक परिप्रेक्ष्य और अस्तित्ववाद

६) उत्तरयोगी श्री अरविन्द (समीक्षात्मक जीवनी)

ललित निबन्धों के संकलन के रूप में आपने -

१) शिखरों का सेतु

२) कस्तूरी मृग

३) चतुर्दिक

४) मानसी गंगा

५) किस किस को नमन करूँ

६) क्या कहूँ कुछ कहा न जा -

आदि ललित निबन्धों का संकलन किया है।

सिंह जी ने संपादन के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किया है आपने आजतक -

१) शान्ति निकेतन से शिवालिक

२) रस रतन

३) कल्पना का नवलेखन विशेषांक

४) हिन्दी निबन्ध

आदि रचनाओं का संपादन किया है। आप वैज्ञानिक रिपोर्ताज के रूप में अंतरिक्ष के मेहमान" साथ ही साथ आपने कविताएँ भी लिखे है।

रचना क्षमता की दृष्टि से सिंह जी में अनंत संभावनाएँ है शायद इसीलिए हिन्दी साहित्य को उपन्यास और कहानी के साथ-साथ अन्य विधाओंमें भी आपने इतना कुछ मौलिक साहित्य दे दिया है जो अपना एक अलग और महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

निष्कर्ष :

शिवप्रसाद सिंह जी का जितना भी साहित्य प्रकाशित हो चुका है वह मौलिक है उन्होंने अपने उपन्यास और कहानियों के द्वारा आझादी के बाद के गांव की पतनशील स्थिति का नंग्न और वास्तविक चित्रांकन किया है। कुछ उपन्यास और कहानियों में सांस्कृतिक नगरों में प्रवेश करके नगरों की तत्कालिन वर्तमान स्थिति का सही चित्र उपस्थित किया है जो स्वयं उन्होंने देखा और भोगा है जीस तरह उन्होंने ग्रामीण और सांस्कृतिक नगरोंका सही स्थिति प्रकट करनेके लिए जिन पात्रोंका सहारा लिया है उन पात्रोंके द्वारा ग्रामांचल और नगरोंका आइना आधुनिक युग के पाठकोंके सामने लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है जीसके लिए उन्होंने यथार्थवाद का सहारा लिया है।

## सन्दर्भ


१) सारिका - १ फरवरी, १९८० - पृ.१०।

२) गोस्वामी तुलसीदास - दोहावली - दोहा संख्या १८७।

३) सारिका १ फरवरी, १९८० - पृ.१५।

४) वही - - पृ.११।

५) डॉ. शिवप्रसाद सिंह -कर्मनाशा की हार - पृ.९।

६) डॉ. शिवसहाय पाठक - "नवनीत" अगस्त, १९६२।

७) कल्पना - ३ मार्च, १९६३।

८) डॉ. शिवप्रसाद सिंह - इन्हें भी इन्तजार है - पृ.२२६

९) कल्पना - ३ मार्च, १९६३।

१०) डॉ. विवेकी राय - "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्रामजीवन" - पृ.१५८।

११) डॉ. शिवप्रसाद सिंह - "मुरदा सराय" - पृ.१०।

१२) - वही - - पृ.८३।

१३) - वही - - पृ.१३।

१४) डॉ. शिवप्रसाद सिंह - भेड़िए - भूमिका से उद्धृत।

१५) - वही - - भूमिकासे उद्धृत।

१६) - वही - - पृ.१३।

१७) - वही - - पृ.८८।